## स्वर्गारोहणपर्व कथासार

स्वर्गारोहण पर्व में पाँच अध्याय तथा २१३ श्लोक हैं।

**प्रथम अध्याय---स्वर्ग में नारद और युधिष्ठिर की बातचीतः--**

स्वर्गलोक में पहुँचकर धर्मराज युधिष्ठिर ने देवताओं तथा साधुगणों के साथ सिंहासन पर विराजमान दुर्योधन को देखा। वह वीरोचित शोभा से सूर्य के समान देदीप्यमान हो रहा है। दुर्योधन की ऐसी उच्च अवस्था को देखकर युधिष्ठिर अमर्ष से भर गया और वहाँ से निकलकर उच्च स्वर से बोला कि हे देवताओं! जिसके कारण हमने मित्र और बन्धुओं को युद्ध में वध किया, जिसके कारण वनवास करके हमें कष्टों को भोगना पडा, भारी सभा में द्रौपदी का अपमान हुआ उसके साथ रहकर पुण्यलोक पाना नहीं चाहता। उसका मुख भी मैं देखना नहीं चाहता। जहाँ मेरे भाई हैं वहाँ मैं जाना चाहता हूँ। उसके वचन सुनकर नारद ने हँसते हुए कहा कि हे राजन्! दुर्योधन के प्रति ऐसी बात कहना तुझे अच्छा नहीं है। वीरगति पाकर वह चिरकाल से स्वर्गलोक में निवास करता है। यह तो स्वर्गलोक है। मर्त्यलोक में जो कुछ हुआ है उसको यहाँ याद करना उचित नहीं है। राजा दुर्योधन के साथ न्यायपूर्वक मिलो। यहाँ पहले के विरोध नहीं रहते हैं। युधिष्ठिर ने अपने भाइयों का पता पूछा और कहा कि यदि पापी दुर्योधन का एसा वीरलोक प्राप्त हुआ है तो सत्यवादी मेरे भाई को कौन सा लोक प्राप्त हुए हैं? मैं उनको देखना चाहता हूँ। महात्मा कर्ण से भी मिलना चाहता हूँ। धृष्टद्युम्न, उसके पुत्र तथा सात्यकि को देखना चाहता हूँ। युद्ध में मारे गये अन्य राजाओं तथा अभिमन्यु आदि से मिलना चाहता हूँ।

**द्वितीय अध्याय--- युधिष्ठिर को नरक दिखाना। वहाँ भाइयों का आक्रंदन सुनकर वहीं रहने का निश्चय करना :--**

राजा युधिष्ठिर ने कर्ण के साथ अपने भाइयों को देखना चाहा। उसने देवगण से कहा कि जहाँ मेरे भाई हैं वही मेरा स्वर्ग है। यह तो मुझे स्वर्ग नहीं है। युधिष्ठिर की इच्छा के अनुसार देवताओं ने उसके सुहृदों को दर्शन कराने के लिये देवदूत को आज्ञा दी। देवदूत ने उसे उस स्थान की ओर ले चला जहाँ भीमसेन आदि थे। वह दुर्गम मार्ग अत्यंत अशुभ था। वह पापाचारी मनुष्य के लिये था। वह घोर अंधकार से आवृत था। केश, शैवल और घास से वह मार्ग भरा हुआ था। रक्त मांस से पंकिल होने के कारण वहाँ दुर्गंध फैल रही थी। हड्डियाँ और केशों से तथा कृमि और कीटों से वह मार्ग भरा हुआ था। जलती आग चारों और घेर लिया। लोहमुखवाले कौए, गीध आदि पक्षी, तथा सूचीमुखवाले विशालकाय प्रेत इधर उधर घूम रहे थे। धर्मात्मा युधिष्ठिर मन ही मन विचार करते उस अमङ्गलमय मार्ग से आगे बढा। आगे जाकर उसने उष्णोदक से भरी एक नदी को देखा। उसे पारकर जाना बहुत कठिन है। दूसरी ओर तीखी तलवार के पत्तों से युक्त असिपत्र नामक वन है। कहीं कहीं तपाये हुये लोहे की

शिलायें रखी गयी हैं। चारों ओर लोहे के कलशों में तेल तपाया जा रहा है। युधिष्ठिर ने देखा कि वहाँ पापप्रवृत्तिवालों को कठोर यातानाएँ दी जा रही हैं। उसने देवदूत से पूछा कि हमें
कितनी दूर और चलना हैं? मेरे भाईयाँ कहाँ हैं? धर्मराज की बात सुनकर देवदूत लौट पडा और कहा कि यहाँ तक ही आप को आना था। असह्य दुर्गन्ध से युधिष्ठिर लौट जाने का निश्चय किया। लौटते समय युधिष्ठिर को दीन मनुष्यों की आर्त नाद सुनायी पडी। हे धर्मनन्दन! कुछ देर तक यहाँ ठहरिये। आपके यहाँ रहने से यहाँ की यातना हमें कष्ट नहीं दे रहा है। उनके आर्तनाद सुनकर युधिष्ठिर सहसा खडा हो गया। उसने पूछा कि आप कौन हैं? क्यों यहाँ रहते हैं। इस प्रकार पूछने पर चारों ओर से बोलने लगे कि मैं कर्ण हूँ, मैं भीमसेन हूँ, मैं अर्जुन हूँ, मैं नकुल हूँ, मैं सहदेव हूँ, मैं धृष्टद्युम्न हूँ, मैं द्रौपदी हूँ। उनकी दुरवस्था तथा पापी दुर्योधन का सम्मान सोचकर युधिष्ठिर चिन्ता व्याकुल हो गया। वह देवताओं तथा धर्म की निन्दा करने लगा। उसने देवदूत से कहा कि तुम जिनके दूत हो उनके पास चले जाओ। मैं वहाँ नहीं आऊँगा। मैं यहाँ ही ठहरता हूँ। क्योंकि यहाँ रहने से मेरे भाई बन्धुओं को सुख मिलता है। युधिष्ठिर के ऐसे कहने से देवदूत इन्द्र के पास गया और वहाँ की सारी बातें सुनायी।

**तृतीय अध्याय--- इन्द्र और धर्म के युधिष्ठिर को समझाना**

युधिष्ठिर को मिलने इन्द्र और शरीर धारण करके धर्म दोनों उसके स्थान पहुँचे। तेजोमय शरीरवाले देवताओं के पहुँचने पर वहाँ का अन्धकार दूर हो गया। पापपुरुषों की यातनायें अदृश्य हो गयीं। वहाँ नरक वातावरण दिखाई नहीं पडता था। इन्द्र के साथ मरुद्गण, ऋषिगण आदि वहाँ पहुँचे जहाँ धर्मपुत्र युधिष्ठिर था। युधिष्ठिर को समझाते इन्द्र ने कहा कि हे तात! मेरी यह बात सुनो। समस्त राजाओं को निश्चय ही नरक देखना पडता है। हर एक मनुष्य को शुभ और अशुभ कर्मों का दो फल होते हैं। पहले अशुभ कर्म भोग लेता है तो बाद को स्वर्ग में जाता है। जिसके पास पापकर्म फल अधिक होता है वह पहले स्वर्गसुख भोगता है। हे नरेश्वर! पाप कर्म का फल भोगकर तुम्हारे भाईयाँ स्वर्ग पहुँचे हैं। उनका दर्शन करो। मानसिक चिन्ता दूर करो। धर्म ने अपने पुत्र से कहा कि हे पुत्र! तुमने सभी परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुआ। तुम में पाप का नाम भी नहीं है। तुम्हारे भाईयाँ नरक में रहने के योग्य नहीं हैं। यह इन्द्र की माया थी। समस्त राजाओं को नरक का दर्शन अवश्य करना है। इसलिये दो घडी तक तुमने दुःख प्राप्त किया। धर्म की सूचना के अनुसार युधिष्ठिर ने देवनदी गङ्गा में स्नान करके तत्काल मानव शरीर को छोड दिया और धर्म के साथ उस स्थान को गया जहाँ पाण्डव और धृतराष्ट्रपुत्र विराजमान थे।

**चतुर्थ अध्याय---दिव्यलोक में युधिष्ठिर का श्रीकृष्ण, अर्जुन आदिका दर्शन करना :-**

दिव्यलोक में युधिष्ठिर ने दिव्यविग्रहसंपन्न श्रीकृष्ण को देखा। वहाँ अर्जुन भगवान् की आराधना में लगा हुआ। उन दोनों ने युधिष्ठिर का यथोचित सम्मान किया। युधिष्ठिर ने दूसरी ओर बारह आदित्यों के साथ विराजमान कर्ण को, वायुदेव के पास बैठे भीमसेन को अश्विनीकुमारों के स्थान में विराजमान नकुलसहदेव को तथा कमलों की माला से अलंकृत द्रौपदी को देखा। इन्द्र स्वयं सबका परिचय देने लगा। उसने कहा कि लक्ष्मी ही मनुष्य लोक में
अयोनिजा द्रौपदी के रूप में अवतीर्ण हुई। उसने अन्य राजों का परिचय भी दिया। इन्द्र ने धृतराष्ट्र, पाण्डु, भीष्म, द्रोणाचार्य आदि महापुरुषों को भी दिखाया।

**पञ्चम अध्याय-महाभारत का उपसंहार तथा माहात्म्य :--**

जनमेजय ने वैशम्पायन से पूछा कि भीष्म, द्रोण, धृतराष्ट्र, विराट आदि स्वर्गलोक में कितने समय तक साथ रहे? उन्हें कैसी गति प्राप्त हुई? इस संदर्भ में व्यास महर्षि ने जो कुछ कहा उसे वैशम्पायन ने सुनाया। उसने कहा कि सभी वीर कर्मभोग के पश्चात् अपने मूल स्वरूप में मिल गये थे। भीष्म वसुओं के स्वरूप में, द्रोण बृहस्पति के रूप में, कृतवर्मा मरुद्गणों में, प्रद्युम्न सनत्कुमार के रूप में प्रविष्ट हो गये। गान्धारी के साथ धृतराष्ट्र ने कुबेर के लोकों को प्राप्त किया। राजा पाण्डु अपनी देवियों के साथ महेन्द्र भवन चले गये। विराट, द्रुपद आदि विश्वेदेवों के स्वरूप में मिल गये। अभिमन्यु चन्द्रमा में, कर्ण सूर्य में, धृष्टद्युम्न अग्नि के रूप में प्रविष्ट हो गये। धृतराष्ट्र के सभी पुत्र मूलतः राक्षस थे। क्षत्रिय होकर युद्ध में शस्त्रों के आघात से पवित्र होकर स्वर्गलोक में गये। विदुर और युधिष्ठिर धर्म के स्वरूप में मिल गये। बलराम साक्षात् आदिशेष के अवतार थे। श्रीकृष्ण नारायण के अवतार थे। इस तरह वैशम्पायन ने कौरवों और पाण्डवों का चरित्र सम्पूर्ण बताया। सौति ने कहा कि महाभारत का आख्यान सुनकर राजा जनमेजय को बडा आश्चर्य हुआ। पश्चात पुरोहितों ने जनमेजय के यज्ञ कर्म को समाप्त कराया। सर्पों को प्राणसंकट से छुटकारा दिलाकर आस्तीक मुनि प्रसन्न हुए। यज्ञ की समाप्ति के बाद ब्राह्मणों को बिदा करके जनमेजय तक्षशिला से फिर हस्तिनापुर गये। इस प्रकार व्यासजी की आज्ञा से जनमेजय के सर्पयज्ञ में वैशम्पायन ने इस इतिहास को सुनाया। व्यासविरचित यह इतिहास परम पवित्र तथा उत्तम है। महर्षि व्यास ने दिव्य दृष्टि से देखकर पाण्डवों तथा अन्य राजाओं की कीर्ति का प्रसार के लिये इस इतिहास की रचना की। व्यासविरचित होने से इसे कार्ष्ण वेद कहते हैं। महान और भारी होने के कारण इसे महाभारत कहते हैं। वेदव्यास की उद्घोषणा है कि अठारह पुराण, सम्पूर्ण धर्मशास्त्र तथा साङ्ग वेद इन तीनों के बराबर केवल एक महाभारत है। तीन वर्षों में इसे पूरा किया। चतुर्विध पुरुषार्थ के बारे में महाभारत में जो कुछ कहा गया है वही अन्यत्र है। जो इस में नहीं है वह अन्यत्र नहीं है। धर्म की कामना से महर्षि व्यास ने इसकी रचना की।

भगवान् व्यास ने इस पवित्र संहिता को अपने पुत्र शुकदेव को पढाया।

उनका उपदेश इस प्रकार है। मैं हाथ ऊपर उठाकर चिल्लाता हूँ कि 'धर्म से अर्थ और काम भी सिद्ध होते हैं। लोग उसका सेवन क्यों नहीं करते'? लेकिन मेरा वचन कोई नहीं सुनता। मोक्षसाधन भूत धर्म नित्य है, सुख दुःख अनित्य। जीवात्मा नित्य है, संसार बन्धन अनित्य। समुद्र और हिमालय जैसे यह महाभारत उपदेशवचनरत्नों का भण्डार है। यह पञ्चम वेद के रूप में प्रसिद्ध है। अन्त में सौति ने कहा कि इस महाभारत आख्यान के पाठ करने से मनुष्य मोक्षरूप परमपुरुषार्थ को प्राप्त कर सकता है।

**।। स्वर्गारोहणपर्व कथासार समाप्त ।।**